चातुर्मास स्थापना विधि

लेखक
मुनि समतासागर

प्रकाशक
गुरुवर साहित्य प्रकाशन

- **कृति** : चातुर्मास स्थापना विधि
- **संस्कृत भक्तियाँ** : आचार्य पूज्यपाद स्वामी
- **लेखक** : मुनि समतासागर
- **संस्करण** : प्रथम, जुलाई, 2012
- **आवृत्ति** : 1100
- **प्रकाशक** : गुरुवर साहित्य प्रकाशन
- **प्राप्ति स्थान** वर्धमान गोल्डी
कटनी (म.प्र.)
मो. 09425152940
- **मुद्रक** : विकास आफसेट, भोपाल

चातुर्मास
'स्थापना और उद्देश्य'

वर्ष में छह ऋतुयें हैं। जिनमें वर्षा, शीत और ग्रीष्म यह तीन मुख्य ऋतुयें हैं। इन तीनों ऋतुओं में प्राकृतिक रूप से वर्षा, शीत और ग्रीष्म ऋतु की तीक्ष्णता रहती है। वर्षा ऋतु श्रावण और भाद्रमास की रहती है, जिसमें जलवृष्टि बहुतायत रहती है। वर्षा के कारण अनगिनत सूक्ष्म-स्थूल जीवों की उत्पत्ति हो जाती है। कीचड़ और हरियाली से मार्ग व्याप्त हो जाता है। नदी, नाले पानी से भर जाते हैं। आवागमन के मार्ग प्रासुक और निरापद नहीं रह पाते। इन सभी बातों को ध्यान में रखकर ही अहिंसा के पालक करुणावान सम्यक्चारित्री साधुजन एक जगह रुककर स्वाध्याय और आत्म-साधना करते हैं। जैन शास्त्रों के अनुसार मूलतः यह वर्षायोग दो माह का होता है किन्तु मार्ग की प्रासुकता और नदी नालों के जल प्रवाह को थमने में एक डेढ़ माह और लग जाता है। अतः इस वर्षायोग को श्रमण परम्परा में आषाढ़ सुदी चतुर्दशी से प्रारम्भ कर कार्तिकवदी अमावस्या तक माना जाता है। इसी वर्षायोग को जन सामान्य चातुर्मास के नाम से जानते हैं। जिसे आषाढ़ माह की अष्टाह्निका से कार्तिक माह की अष्टाह्निका अर्थात् चार माहों की समयावधि से लगाकर चातुर्मास शब्द का प्रयोग करते हैं। मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका रूप चतुर्विध संघ में मुनि, आर्यिका, ऐलक, क्षुल्लक आदि इन दिनों किसी नगर, उपनगर, ग्राम या तीर्थक्षेत्र

आदि पर रुक जाते हैं। साधु संतों के रुकने का यह एक दीर्घकालीन प्रवास रहता है। जिसमें त्यागी तपस्वी जनों को पठन-पाठन, लेखन, स्वाध्याय साधना आदि के लिए दीर्घकालीन समय मिल जाता है और उनसे धर्मलाभ लेने के लिए श्रावक समाज को भी लम्बे प्रवास का अच्छा अवसर मिलता है। इसलिए इस वर्षायोग के लिए श्रावक और साधु उभयपक्षों की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माना गया है।

कृषि कार्य करने वाला किसान जैसे अपनी आजीविका चलाने के लिए वर्षाकाल की प्रतीक्षा बड़ी आतुरता से करता है क्योंकि उस समय का उसका उद्यम ही उसके वर्षभर का प्रमुख आधार है, ठीक इसी तरह धर्मामृत पिपासु श्रावक और साधकजन इस वर्षायोग के लिए प्रतीक्षारत रहते हैं। इसलिए कहा गया है कि यह समय कृषि और कार्य करने सर्वोत्तम है। वैसे भी भारतीय संस्कृति में सभी परम्पराओं में यह श्रावण और भादों का महीना विशिष्ट पर्व त्यौहारों से भरा हुआ है, अतः इन दिनों हर तरफ अलग ही उल्लास का वातावरण दिखता है। साथ ही व्यवसाय की मन्दता और विवाहादि गार्हस्थिक कार्यों का अभाव भी रहता है इसलिए भी भक्ति, पूजा और स्वाध्याय, प्रवचन आदि का धर्मलाभ निराकुलता से लेते हैं। वैसे भी भारत के अतीतयुग में वर्षा के चार महीनों में विशेष प्रयोजन के बिना देशान्तर गमन स्थगित रहता था। राजाओं के युद्ध प्रयाण एवं व्यापारियों के व्यवसाय निमित्त से होने वाले देशान्तर गमन वर्षा के अन्त में ही होते थे। इस तरह से यह चातुर्मास का अवसर वर्ष भर की धर्म प्रभावना का केन्द्र बिन्दु बन जाता है। इन दिनों में व्रत -उपवास और पूजा-विधानादि के अनुष्ठान करके श्रावक-समाज धर्म की प्रभावना बढ़ाती है तो वहीं

मुनि संघों से धर्म–देशना पाकर आहार, विचार, व्यवहार और व्यापार में शुद्धता लाने का प्रयास भी करते हैं। मेरी समझ से चातुर्मास की सबसे बड़ी उपलब्धि यही रहती है कि इन चार माहों में आहार, विचार, व्यवहार और व्यापार की शुद्धि जुड़ जाती है। यही शुद्धता ही गृहस्थ के जीवन में चातुर्मास वर्षायोग की सार्थकता प्रदान करती है। वास्तव में साधु संघ के प्रवास का सच्चा लाभ तो यही है कि हमारे जीवन में आमूलचूल परिवर्तन हो। हमारा जीवन रूपान्तरित हो। फिर हमें किसी से यह कहने की आवश्यकता न पड़े कि हमारे यहाँ मुनि संघ का चातुर्मास हो रहा है; बल्कि आपके आचरण–व्यवहार को देखकर ही व्यक्ति आपोआप समझने लगे कि इनके नगर में मुनिसंघ विराजमान हैं। इन्होंने उनके सामीप्य/सेवा का लाभ सचमुच ही लिया है। श्रावक समाज इन दिनों मुनि संघों की परिचर्या में सहायक बनकर अपनी सेवा भावना से धर्म की प्रभावना करती है। इसलिए तो वर्षाकाल के इस वातावरण को ध्यान में रखकर कबीरदासजी ने लिखा है –

कबिरा बदली प्रेम की हमपे बरखा आई।
अन्तर भीगी आत्मा हरी भरी वनराई॥

प्रेम की बदली आने से जो वर्षा होती है, उससे हृदय तो भीग ही जाता है समूची धरती भी हरी भरी हो जाती है। ठीक इसी तरह इस वर्षावास में झरने वाली गुरुवरों की प्रेम करुणामयी धर्मदेशना से प्राणिमात्र का हृदय भीग जाता है और जीवन धर्म संस्कारों से हरा भरा हो जाता है। आगम शास्त्रों के अनुसार वर्षायोग की स्थापना करने के लिए क्षेत्रकाल की पूर्वापर परिस्थितियों का विचार कर श्रावक समाज से सहमति लेकर चातुर्मास–स्थापना की घोषणा की जाती है। तत्पश्चात्

श्रावक गण मंगल कलश स्थापना और दीप प्रज्ज्वलन करते हैं। मुनि संघ को स्वाध्याय हेतु शास्त्र भेंट किए जाते हैं। मुनि संघ का चातुर्मास के संदर्भ में उपस्थित जन समुदाय को धर्मोपदेश प्राप्त होता है। जिस दिन चातुर्मास का स्थापन होता है उस दिन मुनि गण अपना उपवास रखते हैं। जिस स्थान पर श्रावकों को इस वर्षायोग के समय त्यागी, व्रती, मुनि, आचार्यों का समागम मिल जाता है वहाँ के श्रावक जन अत्यन्त उत्साहचित्त, आनन्दित रहते हैं। अपने नगर में इस समागम को पाने के लिए श्रावकगण बार–बार मुनि संघों के पास जाकर निवेदन करते हैं, उन्हें लाने का प्रयास करते हैं और जिस किसी नगर में चातुर्मास का सुयोग बन जाता है तो श्रावक समाज पूरे चार माह उसे उत्सव का रूप दे देती है। इस तरह से हर दृष्टि से वर्ष के इन चार माहों का महत्त्व है। इस परम पुनीत चातुर्मास से पावन क्षणों में हम अपनी हृदयभूमि को उर्वरा करें ताकि उसमें बोए गए धर्म–संस्कार के बीज भक्ति, विनम्रता और आध्यात्मिक के फलों से जीवन को समृद्ध कर सकें।

❑

चातुर्मास स्थापना विधि

कार्यक्रम स्थल पर मुनिसंघ/आर्यिका संघ मंचासीन

मंगल गीत /मंगलाचरण

समाज प्रमुख द्वारा संक्षिप्त उद्‌बोधन एवं चातुर्मास स्थापना हेतु श्रीफल अर्पण कर निवेदन करें एवं संघ का आशीर्वाद प्राप्त करें।

मुनि /आर्यिका संघ द्वारा चातुर्मास स्थापना की स्वीकृति प्रदान करना .... तीर्थंकर वर्धमान महावीरस्वामी के जिनशासन में मूलसंघ के संस्थापक आचार्य कुन्दकुन्द आम्नाय में इस युग के निर्ग्रन्थ मार्ग प्रवर्तक आचार्य शान्तिसागरजी महाराज, आचार्य वीरसागरजी महाराज, आचार्य शिवसागरजी महाराज के प्रथम शिष्य आचार्य ज्ञानसागरजी महाराज के प्रथम शिष्य आचार्य विद्यासागरजी महाराज [यहाँ पर चातुर्मास स्थापित करने वाले अन्य संघ (मुनि/ आर्यिका) अपनी गुरु परम्परा का उल्लेख करें] के हम शिष्य/शिष्या आपके नगर में चातुर्मास स्थापित करने की घोषणा करते हैं।

सर्वप्रथम ध्वजारोहण हेतु पात्र चयन करें एवं ध्वजारोहण की क्रिया सम्पन्न करायें। (यह क्रिया सपरिवार सम्पन्न करायें)

कलश : चातुर्मास स्थापना हेतु पाँच कलश स्थापित करने हेतु पात्र चयन, बोलियों द्वारा करें। (इस कार्य हेतु सपरिवार अवसर प्रदान करें।)

1. चातुर्मास कलश, 2. ज्ञानकलश, 3. गुरुवर कलश, 4. श्रुतकलश, 5. दयोदय कलश।

ध्वजारोहण के पश्चात् स्थिति अनुरूप चित्र अनावरण एवं

दीप प्रज्ज्वलन का कार्य सम्पन्न करें।

2. संघ को शास्त्र भेंट का कार्य करें। संघ की संख्या के अनुरूप पात्र चयन करें। पात्र कम ज्यादा भी हो सकते हैं।

भक्तिपाठ : तत्पश्चात् मुनि/आर्यिका संघ द्वारा निम्न भक्तियों का पाठ किया जाये - 1. सिद्धभक्ति, 2. योगिभक्ति, 3. चैत्यभक्ति, 4. पंचगुरुभक्ति, 5. शान्तिभक्ति, 6. समाधिभक्ति।

मुनि संघ/आर्यिका संघ द्वारा मंगल प्रवचन/आशीर्वचन

❇ संघ द्वारा कलश स्थापना के दिन उपवास रहता है।

योगधारण : आषाढ़ सुदी चतुर्दशी की रात्रि से कार्तिक वदी (30)अमावश्या की प्रातः बेला तक योगधारण होता है। अतः आषाढ़ सुदी चतुर्दशी एवं कार्तिक वदी (14) चतुर्दशी का उपवास होता है।

इसके अतिरिक्त स्थापना के लिये परिस्थितिवश (इमरजेन्सी में) चार दिन अतिरिक्त निर्धारित किए गए हैं। अतः श्रावण वदी चौथ तक कहीं न कहीं रुककर स्थापना कर ही लेना चाहिए, जिससे कि पंचमी से योग प्रारम्भ हो सके।

चातुर्मास स्थापना संकल्प

अथ वर्षायोग प्रतिष्ठापन/निष्ठापन क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल- कर्मक्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

भक्ति पाठ - 1. सिद्धभक्ति, 2. योगिभक्ति, 3. चैत्यभक्ति, 4. पंचगुरुभक्ति, 5. शान्तिभक्ति, 6. समाधिभक्ति।

सिद्धभक्ति

सिद्धा-नुद्धूत-कर्म-, प्रकृति-समुदयान्, साधितात्म-स्वभावान्।
वन्दे सिद्धिः प्रसिद्ध्यै, तदनुपम-गुण-, प्रग्रहाकृष्टि-तुष्टः॥
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः प्रगुण-गुण-,गणोच्छादि-दोषापहाराद्,
योग्योपादान-युक्त्या दृषद् इह यथा हेम-भावोपलब्धिः ॥ 1॥
नाभावः सिद्धि-रिष्टा, न निज-गुण-हतिस्तत् तपोभि र्न युक्तेः,
अस्त्यात्मानादिबद्धः स्वकृतजफलभुक् -, तत् क्षयान् मोक्षभागी।
ज्ञाता दृष्टा स्वदेह-प्रमिति-रूपसमाहार-विस्तार-धर्मा,
ध्रौव्योत्पत्ति-व्ययात्मा, स्वगुणयुत इतो, नान्यथा साध्यसिद्धिः॥ 2॥
स त्वन्तर्बाह्य-हेतु-, प्रभव-विमल-सद्-दर्शन-ज्ञान-चर्या-
संपद्धेति-प्रघात-, क्षत-दुरित-तया, व्यञ्जिताचिन्त्य-सारैः।
कैवल्यज्ञानदृष्टि-, प्रवर-सुख-महा-, वीर्य सम्यक्त्वलब्धि -
ज्योति-र्वातायनादि-, स्थिर-परमगुणैर -, रद्भुतै-र्भासमान्॥ 3॥
जानन् पश्यन् समस्तं, सम-मनुपरतं, संप्रतृप्यन् वितन्वन्,
धुन्वन् ध्वान्तं नितान्तं, निचित-मनुसमं, प्रीणयन्नीशभावम्।
कुर्वन् सर्व-प्रजाना-, मपर-मभिभवन्, ज्योति-रात्मानमात्मा,
आत्मन्येवात्मनाऽसौ, क्षण-मुपजनयन्-, सत्स्वयम्भूः प्रवृत्तः॥ 4॥
छिन्दन् शेषा-नशेषान्-, निगल-बल-कलींस्तै-रनन्त-स्वभावैः,
सूक्ष्मत्वाग्र्यावगाहा-,गुरु-लघुक-गुणैः, क्षायिकैः शोभमानः।
अन्यैश्चान्य-व्यपोह-, प्रवण-विषय-संप्राप्ति-लब्धि-प्रभावै-
रूर्ध्वं व्रज्या स्वभावात् समय-मुपगतो धाम्नि संतिष्ठतेऽग्र्ये॥ 5॥
अन्याकाराप्ति-हेतु-, र्न च भवति परो येन तेनाल्प-हीनः,
प्रागात्मोपात्त-देह-, प्रति-कृति रुचिराकार एव ह्यमूर्तः।
क्षुत्-तृष्णा-श्वास-कास-, ज्वरमरणजरा-, निष्ट-योग-प्रमोह-

व्यापत्याद्युग्र-दुःख-, प्रभवभवहतेः, कोऽस्य सौख्यस्य माता॥6॥
आत्मोपादान-सिद्धं, स्वय-मतिशय-वद्-, वीत-बाधं विशालं,
वृद्धि-ह्रास-व्यपेतं, विषय-विरहितं, निःप्रतिद्वन्द्व-भावम्।
अन्य-द्रव्यानपेक्षं, निरुपममितं, शाश्वतं सर्व-कालम्,
उत्कृष्टानन्त-सारं, परम-सुखमतस्तस्य सिद्धस्य जातम्॥ 7॥
नार्थः क्षुत्-तृड्-विनाशाद्, विविध-रसयुतै-, रन्न-पानै-रशुच्या,
नास्पृष्टे-र्गन्ध-माल्यै-, र्नहि मृदुशयनै-र्ग्लानि-निद्राद्यभावात्।
आतङ्कार्ते-रभावे, तदुपशमन- सद्-, भेषजानर्थतावद्,
दीपा-नर्थक्य-वद् वा, व्यपगत-तिमिरे, दृश्यमाने समस्ते॥ 8॥
तादृक् - सम्पत् - समेता, विविध-नय-तपः, संयम-ज्ञान-दृष्टि -
चर्या-सिद्धाः समन्तात्, प्रवितत-यशसो, विश्व-देवाधि-देवाः।
भूता भव्या भवन्तः, सकल-जगति ये, स्तूयमाना विशिष्टैस्,
तान् सर्वान् नौम्यनन्तान्, निजिगमिषुररं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम्॥9॥
कृत्वा कायोत्सर्गं, चतुरष्ट-दोष-विरहितं सुपरिशुद्धं।
अतिभक्तिसंप्रयुक्तो, यो वन्दते सो लघु लभते परम सुखम्॥

अंचलिका

इच्छामि भंते। सिद्धभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्म-णाण-सम्मदंसण सम्मचरित्तजुत्ताणं अट्ठविहकम्मविप्पमुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं, उड्ढलोयमत्थयम्मि पइट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं।

योगिभक्तिः

जातिजरो–रुरोग–मरणातुर, शोक सहस्र – दीपिताः,
दुःसह–नरक–पतनसन्त्रस्तधियः प्रतिबुद्ध–चेतसः।
जीवित–मम्बु बिन्दु–चपलं, तडिदभ्र–समा विभूतयः,
सकलमिदं विचिन्त्यमुनयः,प्रशमाय–वनान्त–माश्रिताः॥1॥

व्रतसमिति–गुप्तिसंयुताः, शमसुखमाधाय मनसि वीतमोहाः।
ध्यानाध्ययनवशङ्गताः, विशुद्धये कर्मणां तपश्चरन्ति॥ 2॥

दिनकर किरण–निकर–संतप्त, शिला–निचयेषु निष्पृहाः,
मल–पटला वलिप्त तनवः शिथिलीकृत कर्म – बंधनाः।
व्यपगत–मदन–दर्प–रतिदोष, कषाय–विरक्त–मत्सराः,
गिरिशिखरेषु चंड किरणाभि, मुखस्थितयो दिगम्बराः॥ 3॥

सज्ज्ञानामृतपायिभिः, क्षान्तिपयः सिञ्च्यमानपुण्यकायैः।
धृतसन्तोषच्छत्रकैः, तापस्तीव्रोऽपि सह्यते मुनीन्द्रैः॥ 4॥

शिखिगल कज्जलालिमलिनै, र्विबुधाधिपचाप चित्रितैः,
भीम–रवैर्विसृष्ट–चण्डा शनि, शीतल–वायु–वृष्टिभिः।
गगनतलं विलोक्य जलदैः, स्थगितं सहसा तपोधनाः,
पुनरपि तरुतलेषु विषमासु, निशासु विशङ्कमासते॥ 5॥

जलधारा–शरताडिता, न चलन्ति चरित्रतः सदा नृसिंहाः।
संसारदुःख भीरवः, परीषहा राति–घातिनः प्रवीराः॥ 6॥

अविरत–बहल तुहिन–कण, वारिभि–रंघ्रिप–पत्र–पातनै–
रनवरतमुक्तसीत्काररवैः पुरुषैरथानिलैः शोषितगात्रयष्टयः।

इह श्रमणा धृति–कम्बला–वृताः शिशिर–निशां,
तुषार–विषमां गमयन्ति, चतुःपथे स्थिताः॥ 7॥

इति योगत्रयधारिणः, सकलतपः शालिनः प्रवृद्धपुण्यकायाः।
परमानन्दसुखैषिणः, समाधिमग्र्यं दिशन्तु नो भदन्ताः॥ 8॥

प्रावृट्–काले सविद्युत्प्रपतित–सलिले वृक्षमूलाधिवासाः।
हेमन्ते रात्रि–मध्ये, प्रति–विगतभयाः काष्ठवत् त्यक्तदेहाः।
ग्रीष्मे सूर्यांशुतप्ता, गिरि–शिखर–गताः स्थानकूटान्तरस्थाः।
ते मे धर्म प्रदद्युर्मुनि–गणवृषभा मोक्षनिःश्रेणिभूताः॥ 9 ॥

गिम्हे गिरि–सिहरत्था, वरिसायाले–रुक्खमूलरयणीसु।
सिसिरे वाहि–रसयणा, ते साहू वंदिमो णिच्चं॥ 10॥

गिरि–कन्दर – दुर्गेषु, ये वसंति दिगम्बराः।
पाणिपात्र पुटाहारास्, ते यांति परमां गतिम्॥ 11॥

अंचलिका

इच्छामि भंते । योगिभक्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं अड्ढाइज्जदी–वदोसमुद्देसु, पण्णारस – कम्मभूमिसु आदावण–रुक्खमूल–अब्भोवासठाणमोण–वीरास–णेक्कपास कुक्कुडासण–चउछपक्ख–खवणादि जोगजुत्ताणं, सव्वसाहूणं णिच्चकालं, अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

चैत्यभक्ति

जयति भगवान् हेमाम्भोज-प्रचार-विजृम्भिता-
वमर-मुकुटच्छायोद्गीर्ण- प्रभा - परिचुम्बितौ।
कलुष-हृदया मनोद्भ्रांताः परस्पर-वैरिणः,
विगत-कलुषाः पादौ-यस्य प्रपद्य विशश्वसुः॥ 1॥

तदनु जयति श्रेयान्-धर्मः प्रवृद्ध-महोदयः,
कुगति-विपथ-क्लेशा द्योऽसौ विपाशयति प्रजाः।
परिणत-नयस्याङ्गी-भावाद- विविक्त-विकल्पितम्,
भवतु भवतस्त्रातृ त्रेधा जिनेन्द्र-वचोऽमृतम्॥ 2॥

तदनु जयताज्जैनी वित्तिः प्रभङ्ग-तरङ्गिणी,
प्रभव-विगम ध्रौव्य-द्रव्य-स्वभाव-विभाविनी।
निरुपम-सुखस्येदं द्वारं विघट्य निरर्गलम्,
विगत-रजसं मोक्षं देयान् निरत्यय-मव्ययम्॥ 3॥

अर्हत्सिद्धाचार्यो-, पाध्यायेभ्यस्तथा च साधुभ्यः।
सर्व-जगद्-वंद्येभ्यो नमोऽस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः॥ 4॥

मोहादि-सर्व-दोषारि- घातकेभ्यः सदा हत-रजोभ्यः।
विरहित-रहस्कृतेभ्यः पूजार्हेभ्यो नमोऽर्हद्भ्यः॥ 5॥

क्षान्त्यार्जवादि-गुण-गण, सुसाधनं सकल-लोक-हित-हेतुम्।
शुभ-धामनि धातारं, वन्दे धर्मं जिनेन्द्रोक्तम्॥ 6॥

मिथ्याज्ञानतमोवृत-, लोकैकज्योतिरमित-गमयोगि।

साङ्गोपाङ्ग-मजेयं, जैनं वचनं सदा वन्दे॥ 7॥

भवन-विमान-ज्योति-, र्व्यन्तर-नरलोक विश्व-चैत्यानि।
त्रिजग-दभिवन्दितानां, त्रेधा वन्दे जिनेन्द्राणाम्॥ 8॥

भुवन-त्रयेऽपि भुवन-, त्रयाधिपाभ्यर्च्य-तीर्थ-कर्तृणाम्।
वन्दे भवाग्नि-शान्त्यै, विभवाना-मालया-लीस्ताः॥ 9॥

इति पञ्च-महापुरुषाः, प्रणुता जिनधर्म-वचन-चैत्यानि।
चैत्यालयाश्च विमलां, दिशन्तु बोधिं बुध-जनेष्याम्॥ 10॥

अकृतानि कृतानि-चाप्रमेय-, द्युतिमन्ति द्युतिमत्सु मन्दिरेषु।
मनुजामर-पूजितानि, वन्दे प्रतिबिम्बानि जगत्त्रये जिनानाम्॥ 11॥

द्युति-मण्डल-भासुराङ्ग-, यष्टीः प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानाम्।
भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता, वपुषा प्राञ्जलिरस्मि वन्दमानः॥ 12॥

विगतायुधविक्रिया-, विभूषाः प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणाम्।
प्रतिमाः प्रतिमागृहेषु कान्त्याऽप्रतिमाः कल्मषशान्तयेऽभिवन्दे॥ 13॥

कथयन्ति कषाय-मुक्ति-, लक्ष्मीं परया शान्ततया भवान्तकानाम्।
प्रणमाम्यभिरूपमूर्ति-, मन्ति प्रतिरूपाणि विशुद्धये जिनानाम्॥ 14॥

यदिदं मम सिद्धभक्ति-नीतं सुकृतं दुष्कृतवर्त्मरोधि तेन।
पटुना जिनधर्म एव भक्तिर्भव-ताज्जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे॥ 15॥

अर्हतां सर्व - भावानां, दर्शन -ज्ञान-सम्पदाम्।
कीर्तयिष्यामि चैत्यानि, यथाबुद्धि विशुद्धये॥ 16॥

श्रीमद् – भवन – वासस्था स्वयं भासुर–मूर्तयः।
वन्दिता नो विधेयासुः प्रतिमाः परमां गतिम्॥ 17॥

यावन्ति सन्ति लोकेऽस्मिन्नकृतानि कृतानि च।
तानि सर्वाणि चैत्यानि वन्दे भूयांसि भूतये॥ 18॥

ये व्यन्तर – विमानेषु स्थेयांसः प्रतिमागृहाः।
ते च संख्या–मतिक्रान्ताः सन्तु नो दोष–विच्छिदे॥ 19॥

ज्योतिषा–मथ लोकस्य भूतयेऽद्भुतसम्पदः।
गृहाः स्वयम्भुवः सन्ति विमानेषु नमामि तान्॥ 20॥

वन्दे सुर–किरीटाग्र– मणिच्छाया–भिषेचनम्।
याः क्रमेणैव सेवन्ते तदर्च्चाः सिद्धि–लब्धये॥ 21॥

इति स्तुति पथातीत–श्रीभृता–मर्हतां मम।
चैत्यानामस्तु संकीर्तिः सर्वास्रव–निरोधिनी॥ 22॥

अर्हन् – महा –नदस्य–त्रिभुवन–भव्यजन–तीर्थ–यात्रिक–दुरित–
प्रक्षालनैककारण–मतिलौकिक–कुहक–तीर्थ–मुत्तम तीर्थम्॥ 23॥

लोकालोक – सुतत्त्व – प्रत्यव–बोधन–समर्थ–दिव्यज्ञान–
प्रत्यह–वहत्प्रवाहं व्रत–शीलामल–विशाल–कूल–द्वितयम्॥ 24॥

शुक्लध्यान – स्तिमित – स्थित–राजद्राज – हंसराजित–मसकृत्।
स्वाध्याय–मन्द्रघोषं, नानागुण–समितिगुप्ति–सिकतासुभगम्॥ 25॥

क्षान्त्यावर्त–सहस्रं, सर्वदया–विकच–कुसुम–विलसल्लतिकम्।

दुःसह परीषहाख्य–द्रुततर – रङ्गत्तरङ्ग–भङ्गुर–निकरम् ॥ 26॥

व्यपगत–कषाय–फेनं, राग–द्वेषादि–दोष–शैवल–रहितम्।
अत्यस्तमोहकर्दम–मतिदूर–निरस्त –मरण–मकर–प्रकरम्॥ 27॥

ऋषि–वृषभस्तुति–मन्द्रोद्रेकित–निर्घोष–विविध–विहग–ध्वानम्।
विविधतपोनिधिपुलिनं सास्रव–संवरणनिर्जरा–निःस्रवणम्॥ 28॥

गणधर–चक्र–धरेन्द्र–प्रभृति–महा–भव्यपुंडरीकैः पुरुषैः।
बहुभिः स्नातं भक्त्या, कलिकलुषमलापकर्षणार्थ–ममेयम्॥ 29॥

अवतीर्णवतः स्नातुं, ममापि दुस्तर–समस्त–दुरितं दूरम्।
व्यपहरतु परम–पावन–मनन्य जय्य स्वभाव –भावगंभीरम्॥ 30॥

अताम्र–नयनोत्पलं सकल–कोप–वह्ने–र्जयात्,
कटाक्ष – शर – मोक्ष – हीन – मविकारतोद्रेकतः।
विषाद–मद–हानितः प्रहसितायमानं सदा,
मुखं कथयतीव ते हृदय–शुद्धि–मात्यन्तिकीम्॥ 31॥

निराभरण–भासुरं विगत–राग–वेगोदयात्,
निरम्बर–मनोहरं प्रकृति–रूप–निर्दोषतः।
निरायुध–सुनिर्भयं विगत–हिंस्य–हिंसा–क्रमात्,
निरामिष–सुतृप्ति–मद्–विविधवेदनानां क्षयात्॥ 32॥

मितस्थिति–नखाङ्गजं गत–रजोमल–स्पर्शनम्।
नवाम्बुरुह – चन्दन – प्रतिम – दिव्य – गन्धोदयम्।
रवीन्दु – कुलिशादि – दिव्य – बहुलक्षणालंकृतम्।

दिवाकर-सहस्र-भासुर-मपीक्षणानां प्रियम्॥ 33॥

हितार्थ-परिपन्थिभिः प्रबल-राग-मोहादिभिः,
कलङ्कितमना जनो यदभिवीक्ष्यशो शुद्ध्यते।
सदाभिमुख-मेव यज्जगति पश्यतां सर्वतः।
शरद्-विमल-चन्द्रमण्डलमिवोत्थितं दृश्यते॥ 34॥

तदेत - दमरेश्वर - प्रचल - मौलि - माला-मणि,
स्फुरत् - किरण - चुम्बनीय - चरणारविन्द-द्वयम्।
पुनातु भगवज्जिनेन्द्र! तव रूप - मन्धीकृतम्।
जगत्-सकल-मन्यतीर्थ-गुरु-रूप-दोषोदयैः॥ 35॥

मानस्तम्भाः सरांसि प्रविमलजल, सत्खातिका पुष्पवाटी,
प्राकारो नाट्यशाला द्वितयमुपवनं वेदिकान्त र्ध्वजाद्याः।
शालः कल्पद्रुमाणां सुपरिवृत्तवनं स्तूपहर्म्यावली च,
प्राकारः स्फाटिकोन्त-नृसुरमुनिसभा,पीठिकाग्रे स्वयंभूः॥ 36॥

वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु।
यावन्तिचैत्यायतनानि लोके सर्वाणि वन्दे जिनपुङ्गवानाम्॥ 37॥

अवनि-तल-गतानां, कृत्रिमाऽकृत्रिमाणां,
वन-भवन-गतानां, दिव्य-वैमानिकानाम्।
इह मनुज-कृतानां, देव राजा-र्चितानां,
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि॥ 38॥

जम्बू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-, क्षेत्र त्रये ये भवांश्-
चन्द्राम्भोज शिखण्डिकण्ठकनक-प्रावृड्घनाभाजिनाः।

सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा दग्धाष्ट-कर्मेन्धना,
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः॥ 39॥

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचके, कुण्डले मानुषाङ्के।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ, दधिमुखशिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले यानि चैत्यालयानि॥ 40॥

देवा सुरेन्द्र-नर-नाग-समर्चितेभ्यः,
पाप - प्रणाशकर - भव्य-मनोहरेभ्यः।
घण्टा-ध्वजादि परिवार विभूषितेभ्यो,
नित्यं नमो जगति सर्वजिनालयेभ्यः॥ 41॥

अंचलिका

इच्छामि भंते! चेइय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि, किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण, णिच्चकालं अंचंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति अहमवि इह संतो तत्थ संताइं णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण- संपत्ति होउ मज्झं।

पञ्चमहागुरुभक्ति

श्रीमदमरेन्द्र–मुकुट–प्रघटित–मणि–किरणवारि– धाराभिः।
प्रक्षालित–पद–युगलान्, प्रणमामि जिनेश्वरान् भक्त्या॥ 1॥

अष्टगुणैः समुपेतान्, प्रणष्ट–दुष्टाष्टकर्म–रिपुसमितीन्।
सिद्धान् सतत–मनन्तान्, नमस्करोमीष्ट तुष्टि संसिद्धयै॥ 2॥

साचार–श्रुत–जलधीन्–, प्रतीर्य शुद्धोरुचरण–निरतानाम्।
आचार्याणां पदयुग–, कमलानि दधे शिरसि मेऽहम्॥ 3॥

मिथ्या – वादि – मद्रोग्र–ध्वान्त–प्रध्वंसि–वचन–संदर्भान्।
उपदेशकान् प्रपद्ये, मम दुरितारि–प्रणाशाय॥ 4॥

सम्यग्दर्शन – दीप – प्रकाशका – मेय–बोध–सम्भूताः।
भूरि–चरित्र–पताकास्, ते साधु–गणास्तु मां पान्तु॥ 5॥

जिन–सिद्ध–सूरि–देशक–, साधु–वरानमल गुण गणोपेतान्।
पञ्चनमस्कारपदैस् त्रिसन्ध्य–मभिनौमि मोक्षलाभाय॥ 6॥

एष पञ्चनमस्कारः, सर्व–पापप्रणाशनः।
मङ्गलानां च सर्वेषां, प्रथमं मंगलं भवेत्॥ 7॥

अर्हत्सिद्धाचार्यो–पाध्यायाः सर्वसाधवः।
कुर्वन्तु मङ्गलाः सर्वे, निर्वाण–परमश्रियम्॥ 8॥

सर्वान् जिनेन्द्र चन्द्रान्, सिद्धानाचार्य पाठकान् साधून्।
रत्नत्रयं च वन्दे रत्नत्रय–सिद्धये भक्त्या॥ 9॥

पान्तु श्रीपाद–पद्मानि पञ्चानां परमेष्ठिनाम्।
लालितानि सुराधीश, चूडामणि मरीचिभिः॥ 10॥

प्रातिहार्यैर्जिनान् सिद्धान्, गुणैः सूरीन् स्वमातृभिः।
पाठकान् विनयैः साधून्, योगाङ्गै–रष्टभिः स्तुवे॥ 11॥

अंचलिका

इच्छामि भंते! पंचमहागुरु–भत्ति–काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अट्ठ–महा–पाडिहेर–संजुत्ताणं अरहंताणं, अट्ठ–गुण–संपण्णाणं, उड्ढलोय मत्थयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं, अट्ठ–पवयण–माउया संजुत्ताणं आयरियाणं आयारादि सुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, ति–रयण–गुण पालणरदाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ–गमणं, समाहि–मरणं, जिण–गुणसंपत्ति होउ मज्झं।

शान्तिभक्ति

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्! पादद्वयं ते प्रजा,
हेतुस्तत्र विचित्र-दुःख-निचयः, संसार घोरार्णवः।
अत्यन्त-स्फुरदुग्र - रश्मि -निकर,-व्याकीर्ण-भूमण्डलो,
ग्रैष्मः कारयतीन्दु-पाद-सलिलच्-,छायानुरागं रविः॥ 1॥

क्रुद्धाशीर्विष-दष्ट-दुर्जय-विष,-ज्वालावली विक्रमो,
विद्या-भेषज-मन्त्र-तोय-हवनै-, र्याति प्रशान्तिं यथा।
तद्वत्ते चरणारुणाम्बुज-युगस्, तोत्रोन्मुखानां नृणां,
विघ्नाः काय विनायकाश्च सहसा, शाम्यन्त्यहो विस्मयः॥ 2॥

सन्तप्तोत्तम - काञ्चन - क्षितिधर, श्रीस्पर्द्धि-गौरद्युते,
पुंसां त्वच्चरणप्रणाम करणात् पीडाः प्रयान्ति क्षयम्।
उद्यद्भास्करविस्फुरत्कर-शत-, व्याघात-निष्कासिता,
नाना देहि विलोचन-द्युतिहरा, शीघ्रं यथा शर्वरी॥ 3॥

त्रैलोक्येश्वर-भङ्ग-लब्ध-विजया, दत्यन्त रौद्रात्मकान्,
नाना जन्म-शतान्तरेषु पुरतो, जीवस्य संसारिणः।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना, कालोग्र-दावानलान्,
न स्याच्चेत्तव पाद-पद्म-युगल-स्तुत्यापगा-वारणम्॥ 4॥

लोकालोक-निरन्तर-प्रवितत-, ज्ञानैक-मूर्त्ते विभो!
नाना - रत्न - पिनद्ध - दण्ड-रुचिर-श्वेतात-पत्रत्रय।
त्वत्पाद-द्वय-पूत-गीत-रवतः, शीघ्रं द्रवन्त्यामया,
दर्पाध्मात्-मृगेन्द्रभीम निनदाद्, वन्या यथा कुञ्जराः॥ 5॥

दिव्य-स्त्री नयनाभिराम-विपुल, श्रीमेरु-चूडामणे,
भास्वद् बाल दिवाकर-द्युति-हर-, प्राणीष्ट-भाण्डल।
अव्याबाध-मचिन्त्य-सार-मतुलं, त्यक्तोपमं शाश्वतं।
सौख्यं त्वच्चरणारविन्द-युगल-, स्तुत्यैव सम्प्राप्यते॥ 6॥

यावन्नोदयते प्रभा परिकरः श्रीभास्करो भासयंस्,
तावद् धारयतीह पङ्कज-वनं, निद्रातिभार-श्रमम्।
यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन्!, न स्यात् प्रसादोदयस् -
तावज्जीव-निकाय एष वहति प्रायेण पापं महत्॥ 7॥

शान्तिं शान्तिजिनेन्द्र-शान्तमनसस् त्वत्पाद-पद्माश्रयात्,
संप्राप्ताः पृथिवी-तलेषु बहवः शान्त्यर्थिनः प्राणिनः।
कारुण्यान् मम भक्तिकस्य च विभो! दृष्टिं प्रसन्नां कुरु,
त्वत्पादद्वय-दैवतस्य गदतः शान्त्यष्टकं भक्तितः॥ 8॥

शान्तिजिनं शशि-निर्मल-वक्त्रं, शीलगुण-व्रतसंयमपात्रम्।
अष्टशतार्चित लक्षणगात्रं, नौमि जिनोत्तममम्बुज नेत्रम्॥ 9॥

पञ्चमभीप्सित-चक्रधराणां, पूजितमिन्द्र-नरेन्द्रगणैश्च।
शान्तिकरं गणशान्तिमभीप्सुः षोडशतीर्थकरं प्रणमामि॥ 10॥

दिव्यतरुः सुर-पुष्प-सुवृष्टि, - र्दुन्दुभिरासन-योजन-घोषौ।
आतपवारणचामरयुग्मे, यस्य विभाति च मण्डलतेजः॥ 11॥
तं जगदर्चित-शान्ति-जिनेन्द्रं, शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि।
सर्वगणाय तु यच्छतु शान्तिं, मह्यमरं पठते परमां च॥ 12॥

येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुत-पादपद्माः।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्प्रदीपास्,
तीर्थङ्कराः सतत शान्तिकरा भवन्तु ॥13 ॥

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानाम्।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शान्तिं भगवान् जिनेन्द्रः ॥14 ॥

क्षेमं सर्वप्रजानां, प्रभवतु बलवान्, धार्मिको भूमिपालः,
काले काले च सम्यग्, वितरतु मघवा, व्याध्यो यान्तु नाशम्।
दुर्भिक्षं चोरिमारिः, क्षणमपि जगतां, मास्मभूज्जीव-लोके,
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं, प्रभवतु सततं, सर्व-सौख्य-प्रदायि ॥ 15 ॥

तद् द्रव्य मव्ययमुदेतु शुभःस देशः,
संतन्यतां प्रतपतां सततं सकालः।
भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण,
रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गे ॥ 16 ॥

प्रध्वस्त घाति कर्माणः, केवल-ज्ञानभास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतां शान्तिं वृषभाद्या जिनेश्वराः ॥ 17 ॥

अंचलिका

इच्छामि भंते! संतिभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, पञ्च-महा-कल्लाण-संपण्णाणं अट्ठ-महापाडिहेर-सहियाणं चउतीसातिसय-विसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देवेंद-मणिमय-मउड-मत्थय-महियाणं बलदेव-वासुदेव चक्कहर-रिसि-मुणि-जदि-

अणगारोवगूढाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महापुरिसाणं णिच्चकालं, अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं।

❑

समाधि भक्ति

स्वात्माभिमुख-संवित्ति, लक्षणं श्रुत-चक्षुषा।
पश्यन्पश्यामि देव त्वां केवलज्ञान-चक्षुषा ॥
शास्त्राभ्यासो, जिनपति-नुतिः सङ्गति सर्वदार्यैः।
सद्वृत्तानां, गुणगण-कथा,दोषवादे च मौनम् ॥ 1 ॥

सर्वस्यापि प्रिय-हित-वचो भावना चात्मतत्त्वे।
संपद्यन्तां, मम भव-भवे यावदेतेऽपवर्गः ॥ 2 ॥

जैनमार्ग-रुचिरन्यमार्ग निर्वेगता, जिनगुण-स्तुतौ मतिः।
निष्कलंक विमलोक्ति भावनाः संभवन्तु मम जन्मजन्मनि ॥ 3 ॥

गुरुमूले यति-निचिते, - चैत्यसिद्धान्त वार्धिसद्घोषे।
मम भवतु जन्मजन्मनि, सन्यसनसमन्वितं मरणम् ॥ 4 ॥

जन्म जन्म कृतं पापं, जन्मकोटि समार्जितम्।
जन्म मृत्यु जरा मूलं, हन्यते जिनवन्दनात् ॥ 5 ॥

आबाल्याज्जिनदेवदेव! भवतः, श्रीपादयोः सेवया,
सेवासक्त-विनेयकल्प-लतया, कालोऽद्यया-वद्गतः।

त्वां तस्याः फलमर्थये तदधुना, प्राणप्रयाणक्षणे,
त्वन्नाम-प्रतिबद्ध-वर्णपठने,कण्ठोऽस्त्व-कुण्ठो मम॥6॥

तवपादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र! तावद् यावन्निर्वाण-संप्राप्तिः॥ 7॥

एकापि समर्थेयं, जिनभक्ति दुर्गतिं निवारयितुम्।
पुण्यानि च पूरयितुं, दातुं मुक्तिश्रियं कृतिनः॥ 8॥

पञ्च अरिंजयणामे पञ्च य मदि-सायरे जिणे वंदे।
पञ्च जसोयरणामे, पञ्च य सीमंदरे वंदे॥ 9॥

रयणत्तयं च वन्दे, चउवीस जिणे च सव्वदा वन्दे।
पञ्चगुरूणां वन्दे, चारणचरणं सदा वन्दे॥ 10॥

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म, - वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणिदध्महे॥ 11॥

कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं, मोक्षलक्ष्मी-निकेतनम्।
सम्यक्त्वादि गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम्॥ 12॥

आकृष्टिं सुरसम्पदां विदधते, मुक्तिश्रियो वश्यता-,
मुच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां विद्वेषमात्मैनसाम्।
स्तम्भं दुर्गमनं प्रति-प्रयततो, मोहस्य सम्मोहनम्,
पायात्पञ्च-नमस्क्रियाक्षरमयी,साराधना देवता॥ 13॥

अनन्तानन्त संसार, - संततिच्छेद-कारणम्।
जिनराज-पदाम्भोज, स्मरणं शरणं मम॥ 14॥

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
तस्मात् कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर!॥ 15॥

नहित्राता नहित्राता नहित्राता जगत्त्रये।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति॥ 16॥

जिनेभक्ति-र्जिनेभक्ति-, र्जिनेभक्ति-र्दिने दिने।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु, सदा मेऽस्तु भवे भवे॥ 17॥

याचेऽहं याचेऽहं, जिन! तव चरणारविन्दयोर्भक्तिम्।
याचेऽहं याचेऽहं, पुनरपि तामेव तामेव॥ 18॥

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी-भूत पन्नगाः।
विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ॥19॥

इच्छामि भंते! समाहिभत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, रयणत्तय-सरूवपरमप्पज्झाणलक्खणं समाहि-भत्तीये णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमंसामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं समाहि-मरणं जिणगुण-संपत्ति होउ मज्झं।

वर्षायोग निष्ठापन विधि :

वर्षायोग निष्ठापन में संघ द्वारा स्थापना सम्बन्धी समस्त भक्तियों का पाठ एवं ध्वज विसर्जन की क्रिया की जाना चाहिए। तत्पश्चात् धर्म सभा की सम्पूर्ण क्रिया एवं संघ द्वारा आशीर्वचन।

विशेष : वर्षायोग स्थापना की सम्पूर्ण विधि (मुनि संघ द्वारा किए गए भक्ति पाठ आदि) निष्ठापन में भी की जाती है। इसमें विशेष यह है कि समारोह में स्थापित किए गए कलशों का निष्ठापन एवं ध्वज विसर्जन विधि -पूर्वक करना चाहिए एवं कलश आदि सामग्री स्थापना करने वाले सौभाग्यशाली परिवारों को प्रदान करना चाहिए।

चातुर्मास स्थान की सीमा :

वर्षायोग के लिए निश्चित किए गए ग्राम, नगर या क्षेत्र की परिधि (15-20 कि. मी.) सीमा निर्धारित की जाती है, ताकि प्रतिकूल परिस्थिति में स्थानान्तरण कर धर्म-साधना के लिए निराकुलता प्राप्त की जा सके।

कलश कैसा होना चाहिए ?

1. वर्षायोग स्थापना का कलश या कोई अन्य मंगल कार्यक्रम का मंगल कलश लोह धातु या स्टील आदि का न हो।
2. वर्षायोग स्थापना का कलश यदि स्वर्ण का हो तो अति उत्तम, यदि इतना महंगा न बना सकें तो चाँदी। यदि चाँदी का भी न हो सके तो पीतल या ताँबे का होना चाहिए। ये धातुयें श्रेष्ठ एवं प्रशस्त मानी गई हैं।
3. मंगल कलश खाली स्थापित न करें। कलश में हल्दी की गांठ,

सुपारी गोल (7 नग)विषम संख्या में रखें, पीली सरसों, कपूर की डली, सवा रुपया, चावल, चाँदी का स्वस्तिक, पंचरत्न आदि सामग्री रखें।
4. मंगल कलश की स्थापना के पूर्व उस स्थान की जल से शुद्धि करना चाहिए तथा मंगल कलशों की शुद्धि 81 कलशों द्वारा शुद्धि मन्त्र के माध्यम से करना चाहिए। तत्पश्चात् मंगल कलशों पर केशर द्वारा स्वस्तिक बनायें एवं कलशों की ग्रीवा पर पंचवर्ण मौली बन्धन कर स्थापना के स्थान पर चावल के पीले पुष्पों से स्वस्तिक बनायें, उन स्वस्तिकों पर ही कलश स्थापित करें।
5. कलश की स्थापना उत्तर और पूर्व के ईशान कोण में करनी चाहिए।
6. कलश स्थापना करने वाला व्यक्ति अंग भंग न हो। कुष्ठ रोगी न हो, अन्धा न हो। समाज से बहिष्कृत न हो।
7. वर्षायोग विसर्जन के बाद कलश उन्हें प्रदान करें, जिन्होंने स्थापना की थी। वह अपने घर में ले जाकर ईशान कोण में स्थापित करें।

कलश स्थापना विधि प्रारम्भ

(ब्रह्मचारी भैया या पण्डितजी द्वारा)

दिग्बंधन

(प्रत्येक दिशा में मुष्टि बंद कर मंत्र के साथ पुष्प या सिद्धार्थ (पीला सरसों) क्षेपित करें)

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां पूर्व-दिशात् समागत-विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं आग्नेय-दिशात् समागत-विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ ह्रूं णमो आयरियाणं ह्रूं दक्षिण-दिशात् समागत-विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं नैऋत्य-दिशात् समागत-विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ ह्रः णमो लोएसव्वसाहूणं ह्रः पश्चिम-दिशात् समागत-विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं ह्रां वायव्य-दिशात् समागत-विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं ह्रीं उत्तर-दिशात् समागत-विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ ह्रूं णमो आयरियाणं ह्रूं ईशान-दिशात् समागत-विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं ह्रौं अधो-दिशात् समागत-विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ ह्रः णमो लोएसव्वसाहूणं ह्रः ऊर्ध्व-दिशात् समागत-विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः णमो अरिहंताणं ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः सर्वदिशतः समागत-विघ्नान् निवारय निवारय मां एतान् सर्व रक्ष रक्ष स्वाहा।

❖ पात्र चयन कर ध्वजारोहण करावें।

❖ विधानाचार्य जल से हस्त प्रक्षालन करायें।

1. ॐ ह्रीं असुजर सुजर भव स्वाहा

तत्पश्चात् भूमि शुद्ध करें

2. ॐ ह्रीं भूः शुद्धयतु स्वाहा

3. सकलीकरण करें। सकलीकरण मन्त्र -

ॐ ह्रां णमो अरिहंताणं मम शीर्ष रक्ष ह्रूं फट् स्वाहा

ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं मम मस्तक रक्ष ह्रूं फट् स्वाहा

ॐ ह्रूं णमो आइरियाणं मम हृदय रक्ष ह्रूं फट् स्वाहा

ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं मम नाभि रक्ष ह्रूं फट् स्वाहा

ॐ ह्रः णमो लोएसव्वसाहूणं मम पादौ रक्ष ह्रूं फट् स्वाहा

मंगल कलश स्थापना मंत्र

ॐ श्रीमत् अर्हत् परमेश्वरोपदिष्ट-शिष्टेष्ट-इयामूलधर्म-प्रभावक-यष्ट-याजक-प्रभृति भव्यजनानां सद्धर्म-श्री-बलायुरा-रोग्यैश्वर्याभिवृद्धिरस्तु। श्रीमज्जिनशासने भगवतो महति महावीर वर्द्धमान तीर्थंकरस्य धर्मतीर्थे श्री मूलसंघे कुन्दकुन्दाम्नाये मध्यलोके जम्बूद्वीपे सुदर्शन मेरोर्दक्षिण भागे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे भारतदेशे ....नगरे विविधालंकार मंडित यज्ञमण्डपे हुण्डावसर्पिणी काले दुःखमनाम्नि पंचम कालयुगे प्रवर्तमाने .....वीर निर्वाण संवत्सरे मासोत्तममासे ....मासे ....पक्षे ....तिथौ ....वासरे जिनप्रतिमायाः सन्निधौ चातुर्मास निर्विघ्न समाप्त्यर्थं सकलाभ्युदय निःश्रेयस सिद्ध्यर्थं शुद्ध्यर्थं द्रव्यशुद्ध्यर्थं पात्र शुद्ध्यर्थं क्रिया शुद्ध्यर्थं शान्त्यर्थं पुण्याहवाचनार्थं नवरत्न-गंध-पुष्पाक्षतादि बीजपूर शोभित शुद्ध प्रासुक जल परिपूरितं मंगल कुम्भं मण्डपाग्रे स्वस्त्यै स्थापनं करोमि इवीं क्ष्वीं हं सः स्वाहा।

(मंगल कलश स्थापित करके चारों कोनों पर कलश स्थापन करें।)

मुनि श्री द्वारा रचित, अनुवादित एवं सम्पादित कुछ विशिष्ट कृतियों की दिग्दर्शिका

- **सागर बूँद समाय** - आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के विशिष्ट विचार-सूत्रों की एक संग्रहणीय कृति है। भक्ति, स्वाध्याय, साधना, धर्म, संस्कृति एवं सत् शिव सुन्दर रूप पाँच खण्डों में विभाजित 1245 बोध-वाक्यों की इस कृति का विमोचन भारत के राष्ट्रपति डॉ. शंकरदयाल शर्मा ने नवम्बर माह, सन् 1995 में भोपाल (म.प्र.) में किया था।
- **महायोगी महावीर** - भगवान् महावीरस्वामी के जीवन दर्शन से सम्बन्धित संक्षिप्त सारगर्भित कृति है। भगवान् महावीर स्वामी के 2600 वें जन्म महोत्सव वर्ष पर इस कृति का आलेखन एवं प्रकाशन हुआ। महावीर से सम्बन्धित जानकारी के लिए इसे महावीर डिक्शनरी भी कहा जा सकता है।
- **पर्युषण के दश दिन** - दशधर्मों की सरल सुबोध और सारगर्भित व्याख्या की एक प्रतिनिधि कृति है। पर्युषण के दिनों में त्यागी व्रती और विद्वानों के साथ-साथ सामान्य जन के भी काम आने वाली अनुपम कृति मुनिश्री के द्वारा सृजित है।
- **अनुप्रेक्षा प्रवचन** - बारह भावनाओं पर दिए गये बारह प्रवचनों की एक मौलिक विशिष्ट कृति।
- **हरियाली हिरदय बसी** - चातुर्मास काल में आने वाले पर्व, त्यौहारों या विभिन्न अवसरों पर प्रदत्त प्रवचनों का अनूठा संग्रह।
- **जैन तत्त्वबोध** - जैनधर्म के आचार-विचार तथा ऐतिहासिक परम्पराओं के प्रामाणिक उल्लेखों से समन्वित यह कृति संक्षिप्त, सरल और सारगर्भित है। यह कृति निश्चित ही जैनधर्म के के.जी. से पी.जी. के कोर्स की पूर्ति करती है।

- **दिगम्बर जैन मुनि** - मुनिचर्या को दर्शाने वाली एक सरल सुबोध कृति। दिगम्बर मुनि की दिनचर्या से जुड़े हुए विविध आयामी बिन्दुओं का व्यवहारिक और वैज्ञानिक विश्लेषण इस कृति में अपने आप में अनूठा है।
- **कथा तीर्थंकरों की** - चौबीस तीर्थंकर भगवन्तों के तीन भवों से सम्बन्धित जीवन (कथानक) को रेखांकित करने वाली एक विशिष्ट कृति।
- **शलाका पुरुष** - जैन परम्परा में वर्णित 63 शलाका पुरुषों के जीवन चरित्र को निरूपित करने वाली कृति।
- **बारस अणुवेक्खा** - आचार्य प्रवर कुन्दकुन्द स्वामी विरचित इस ग्रन्थ का दोहानुवाद, अन्वयार्थ, भावार्थ सहित विशिष्ट प्रकाशन।
- **भक्तामर प्रश्नोत्तरी** - आचार्य प्रवर मानतुंग विरचित संस्कृत स्तोत्र (भक्ति काव्य) का दोहानुवाद सहित प्रश्नोत्तरी ग्रन्थ। इसमें 48 काव्यों पर आधारित प्रश्नोत्तरी में प्रासंगिक विषय की विवेचना की गई है।
- **स्तुति निकुंज** - अर्थ सहित विभिन्न स्तोत्र, पाठ आदि के रूप में संयोजित एक अत्यन्त उपयोगी कृति।
- **बेजुवानों की बात** - दया, करुणा, शाकाहार जैसे मानवीय धर्मों की प्रस्तुति कारक एक विशिष्ट संग्रहणीय कृति, जिसमें कत्लखानों और हिंसा के दुष्परिणामों को दर्शाया गया है।
- **पंचकल्याणक** - तीर्थंकर भगवन्तों के गर्भ, जन्म आदि अवसरों पर होने वाले प्रभावोत्पादक अतिशयकारी कल्याणक-कार्यों का कथन करने वाली सारगर्भित एक लघु पुस्तिका।

❑

गुरुवर साहित्य प्रकाशन समिति

(स्थायी स्तंभ)

1. चौधरी रमेशचंद्र जैन, अशोकनगर (म.प्र.)
2. निर्मलचन्द सराफ, सतना
3. राजेन्द्र जैन (गृहशोभा), सतना
4. सिंघई अजितकुमार जैन, कटनी
5. सिंघई सुधीरकुमार जैन, कटनी
6. राजीव जैन (लकी बुक डिपो), ललितपुर
7. प्रो. आर. के. जैन, विदिशा
8. छिकोड़ी लाल जैन, गोटेगांव (म.प्र.)
9. रूपेन्द्र मोदी, नागपुर
10. संजय जैन, संजय क्रॉकरी, विदिशा
11. पवन जैन (कान्हीवाडा वाले), नागपुर
12. श्रीमति शकुन्तला जैन (जैन मेडम), सिवनी
13. श्री अजित आदिनाथ केटकाळे, इचलकरंजी (महा.)
14. श्री प्रथमेश धामने, इचलकरंजी (महा.)

अन्य प्राप्तिस्थान : वर्धमान (गोल्डी) कटनी (म.प्र.) मो. 09425152940, सोनू सिंघई, नागपुर (महा.) मो.09423401297, वीरेन्द्र सिंगलकर, नागपुर (महा.) मो. 09422807850, राजीव जैन (लकी बुक डिपो) ललितपुर (उ.प्र.) मो. 09838020202, ब्र. तात्याजी, शांतिविद्या ज्ञानसंवर्धन समिति, वीराचार्य भवन, कोल्हापुर रोड, सांगली. मो. 09422616167

मुनि श्री समतासागरजी महाराज

13 जुलाई, 1962 (वि.सं. 2019) को नन्हीं देवरी, सागर (म.प्र.) में जन्मे मुनि श्री समतासागरजी नगर सागर (ग्रीष्मावकाश 1980) में आचार्य श्री का सान्निध्य पाकर प्रभावित हुए। सिद्धक्षेत्र मुक्तागिरि में संघ में सम्मिलित हो, ढाई वर्ष तक गुरुवर की आशीष-छाया में स्वाध्याय साधना करते रहे। शाश्वत् सिद्धक्षेत्र तीर्थराज सम्मेदशिखर (झारखण्ड) में 10 फरवरी, 1983 को ऐलक दीक्षा एवं इसी वर्ष निकटस्थ 'ईशरी' नगर में चातुर्मास के मध्य 25 सितम्बर (कुँवार वदी तीज)को जैनेश्वरी मुनि दीक्षा प्राप्त की। गुरुवर आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के प्रभावक शिष्य मुनि श्री समतासागरजी कुशल वक्ता, एक अच्छे विचारक, लेखक और प्रभावी प्रवचनकार हैं। विभिन्न स्थलों पर चातुर्मास करके युवा पीढ़ी को संस्कारित कर आपने अभी तक जो धर्म प्रभावना की है, वह अद्‌भुत है।

पूर्व नाम : प्रवीणकुमार
माता-पिता : श्री राजाराम जैन-श्रीमति चिरौंजाबाई
शिक्षा : हायर सेकेण्डरी
संघ प्रवेश : सन् 1980 पर्युषण पर्व, सिद्धक्षेत्र मुक्तागिरि (म.प्र.)
बड़े भाई : सुरेन्द्रकुमार जैन, इंजी. बिलासपुर (छ.ग.)
बड़ी बहिन : श्रीमती माया - श्री सुरेश जैन, दमोह (म.प्र.)
छोटी बहिनें :
- ममताजी, आर्यिका संयममतिजी
- सुनीताजी, स्वभावमति जी (संघस्थ- आर्यिका दृढ़मतिजी) एवं

● ब्र.बबीताजी (संयम मार्ग में साधनारत)

कृतियाँ

संयोजन : सागर बूँद समाय (विमोचन : राष्ट्रपति शंकरदयाल शर्मा 1994 भोपाल), सर्वोदय सार, तेरा सो एक, श्रावकाचार कथा कुंज, स्तुति निकुंज, बेजुबानों की बात, सुप्रभाती, समाधितन्त्र।

आलेखन: विलक्षण हैं दशलक्षण, सार संचय, समझें इसे हम वर्ष भर, शलाका पुरुष, पंचकल्याणक प्रतिष्ठा, कथा तीर्थंकरों की, महायोगी महावीर (विमोचन-मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह, सन् 2001, टीकमगढ़)

प्रवचन : प्रवचन पथ, हरियाली हिरदय बसी, चातुर्मास के चार चरण, पर्युषण के दश दिन (विमोचन : राज्यपाल श्री महावीर भाई, सन् 1999, भोजपुर, भोपाल), अनुप्रेक्षा प्रवचन।

- अनेक जैनग्रंथों का दोहानुवाद।
- गीत, गजल, मुक्तक, कविता आदि विधाओं में अनेक काव्य संग्रह।
- मुनिश्री के साहित्य पर अब तक दो पी-एच.डी. हुई।

समाधि भावना

दिनरात मेरे स्वामी मैं भावना ये भाऊँ।
देहान्त के समय में तुमको न भूल जाऊँ॥

शत्रु अगर कोई हो संतुष्ट उनको कर दूँ।
समता का भाव धर कर सबसे क्षमा कराऊँ॥

त्यागूं आहार पानी औषध विचार अवसर।
टूटे नियम न कोई दृढ़ता हृदय में लाऊँ॥

जागें नहीं कषायें नहिं वेदना सतावे।
तुमसे ही लौ लगी हो दुर्ध्यान को भगाऊँ॥

आतम स्वरूप अथवा आराधना विचारूँ।
अरहंत सिद्ध साधू रटना यही लगाऊँ॥

धर्मात्मा निकट हों चरचा धर्म सुनावें।
वह सावधान रक्खे गाफिल न होने पाऊँ॥

जीने की हो न वाञ्छा मरने की हो न इच्छा।
परिवार मित्र जन से मैं मोह को हटाऊँ॥

भोगे जो भोग पहले उनका न होवे सुमरन।
मैं राज्य सम्पदा या पद इन्द्र का न चाहूँ॥

रत्नत्रय का पालन हो अंत में समाधि।
'शिवराम' प्रार्थना यह, जीवन सफल बनाऊँ॥